



सूफी संत मखदूम बिहारी

बिहार की गौरवशाली धरती ने जहाँ एक ओर राजा-महाराजाओं, धर्मगुरुओं, विद्वानों, कवियों, लेखकों, नेताओं और संगीतकारों को जन्म दिया, वहीं दूसरी ओर महान् सूफी-संतों को भी पैदा किया, जिनमें मखदूम बिहारी के नाम को किसी परिचय की जरूरत नहीं है।

शेख शरफुद्दीन अहमद यहया मनेरी का जन्म शाबान के अंतिम शुक्रवार 661 हिजरी (जून, 1263) को पटना से 25 किलोमीटर पश्चिम में राष्ट्रीय राजमार्ग नंबर 30 पर स्थित मनेर में हुआ। उनका नाम अहमद, उपनाम शरफुद्दीन और 'मखदूम-उल-मुलक बिहारी' उपाधि थी। पिता का नाम शेख यहया था, जो जुबैर बिन अब्दुल मुत्तलिब के वंश के थे। इस प्रकार उनका परिवार हाशमी कुरैशी था। उनके परदादा मोहम्मद ताज फकीह अपने समय के बड़े विद्वानों में थे। वे सीरिया से मनेर (बिहार) में आकर बस

गए। कुछ लेखकों ने उनको शहाबुद्दीन गोरी का समकालीन बताया है। कुछ समय मनेर में गुजारकर अपने गृहस्थान लौट गए और जीवन का शेष भाग सीरिया में ही गुजारा, पर परिवार मनेर में ही रहा।

शेख शरफुद्दीन अहमद के नाना शेख शहाबुद्दीन जगजोत सोहरावर्दी शृंखला के सूफियों में थे। मातृभूमि काशगर थी, वहाँ से भारत आए और मौजा जेठली में बस गए, जो पटना से तीन मील की दूरी पर है। उनकी एक पुत्री से शेख शरफुद्दीन अहमद यहया मनेरी और दूसरी पुत्री से शेख अहमद चर्मपोश जैसे विख्यात सूफी पैदा हुए।

उनकी माता का नाम बीबी रजिया था, जो 'बड़ी बुआ' के नाम से प्रसिद्ध थीं। मखदूम की माता न केवल एक बड़े सूफी की पुत्री और महान् सूफी की पत्नी थीं, बल्कि स्वयं भी सूफी थीं। उन्होंने मखदूम का लालन-पालन बड़े लाड़-प्यार से किया। मखदूम को कभी भी बिना वजू के दूध नहीं पिलाया। मखदूम के तीन भाई और थे—शेख खलीलुद्दीन, जलीलुद्दीन और हबीबुद्दीन।

उनकी आरंभिक शिक्षा उनके माता-पिता के संरक्षण में हुई। जब कुछ बड़े हो गए तो उन्हें मकतब में दाखिल कराया गया। उस समय शिक्षा का यह आम चलन था कि पाठ्य-पुस्तकों के प्रत्येक शब्द को याद कराया जाता था। मखदूम ने भी इस प्रथा का पालन किया; परंतु इस व्यवस्था पर खेद प्रकट करते हुए लिखा कि काश! उसकी जगह मुझे कुरान याद कराया जाता।

इसी समय में इल्तुतमिश वंश का दिल्ली में अंत हुआ और गुलाम वंश सत्ता में आया। सत्ता परिवर्तन ने राजधानी और उसके आसपास में एक हलचल सी पैदा कर दी। नए लोग आबाद हुए और पुराने लोग जाने लगे। शेख शरफुद्दीन अबु तवामा ऐसे ही लोगों में थे, जिनको दिल्ली छोड़नी पड़ी। वे दिल्ली से सुनारगाँव जाते हुए मनेर में ठहरे। मखदूम के पिता शेख यहया ने उनका बड़ा सम्मान और सेवा की। इससे प्रभावित होकर मौलाना अबू तवामा मनेर में कुछ दिन और ठहर गए। मखदूम उनके ज्ञान एवं शिक्षा से



अति प्रभावित हुए और उनसे शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की। जिस समय मौलाना अबू तवामा मनेर पहुँचे, उस समय मखदूम की आयु किसी ने 8 और किसी ने 12 वर्ष लिखी है।

मखदूम भी मौलाना अबू तवामा की परहेजगारी, संयम और विद्वत्ता से बहुत प्रभावित हुए और कहा कि धार्मिक ज्ञान की शिक्षा ऐसे ही महापुरुष से प्राप्त करनी चाहिए। अतः उन्होंने अपने माता-पिता से सुनारगाँव जाने की अनुमति माँगी। उनकी स्वीकृति से मौलाना अबू तवामा के साथ सुनारगाँव चले आए। स्वयं मखदूम लिखते हैं—“मौलाना शरफुद्दीन अबु तवामा ऐसे विद्वान् थे कि समस्त भारत में उनका उदाहरण दिया जाता था और शिक्षा एवं ज्ञान जगत् में उनके समान कोई नहीं था।” मखदूम



सुनारगाँव पहुँचकर शिक्षा-प्राप्ति में तल्लीन हो गए।

मखदूम को अध्ययन एवं शिक्षा-प्राप्ति की इतनी ललक थी कि छात्रों और अन्य व्यक्तियों के साथ आम दस्तरख्वान पर उपस्थित होना और सबके साथ खाने में सम्मिलित होना पसंद नहीं था, क्योंकि इसमें कुछ अधिक समय लग जाता है। मौलाना शरफुद्दीन अबु तवामा ने मखदूम की तल्लीनता और ज्ञान-प्राप्ति के प्रति उनकी लगन देखकर इसका प्रबंध कर दिया कि उनका खाना उनके एकांत में पहुँचाया जाए।

मखदूम का यह समय पूर्णतः शिक्षा-प्राप्ति में गुजरा। कहा जाता है कि सुनारगाँव में निवास के समय गृहस्थान से जो पत्र पहुँचते थे, उनको मखदूम किसी थैले में डालते जाते थे, इसलिए पढ़ते नहीं थे कि कहीं पत्र पढ़कर मन विचलित और उद्देश्य-प्राप्ति में बाधा खड़ी न हो जाए।

मखदूम ने सुनारगाँव में मौलाना शरफुद्दीन अबु तवामा से समस्त प्रचलित विद्याएँ प्राप्त कीं। धार्मिक विद्याओं की प्राप्ति के बाद उनके उस्ताद की इच्छा हुई कि मखदूम उन विद्याओं की भी शिक्षा ग्रहण करें, जिनके उस समय के छात्र और नौजवान इच्छुक रहा करते थे। लेकिन मखदूम ने अपनी विवशता प्रकट करते हुए कहा कि धार्मिक

विद्याएँ ही मेरे लिए पर्याप्त हैं।

मौलाना शरफुद्दीन अबु तवामा ने मखदूम के सुनारगाँव में निवास के समय उनका पूरा-पूरा संरक्षण किया और उनकी योग्यता एवं स्वभाव को देखकर अपनी पुत्री से उनका विवाह कर उनको अपना दामाद बना लिया। सुनारगाँव में ही मखदूम के बड़े पुत्र शेख जकीउद्दीन का जन्म हुआ।

शिक्षा-प्राप्ति की अवधि में जो पत्र घर से आते, मखदूम उनको एक थैले में डालते जाते थे। शिक्षा समाप्त करने के बाद जब उन्होंने पत्रों को थैले से निकाला तो जो पहला पत्र हाथ में आया, उसमें उनके पिताजी की मृत्यु की सूचना थी। इस सूचना से माता का खयाल आया। मखदूम ने अपने उस्ताद से घर लौटने की अनुमति माँगी और पुत्र शेख जकीउद्दीन के साथ मनेर वापस आए। मखदूम के पिता शेख यहया मनेरी का निधन 11, शाबान 690 हिजरी (1291) में हुआ। इससे सिद्ध होता है कि मखदूम की वापसी 690 हिजरी (1291) के किसी महीने में हुई।

मनेर पहुँचकर मखदूम कुछ दिनों अपनी माँ की सेवा में रहे। फिर अपने पुत्र जकीउद्दीन को माँ के संरक्षण में देकर निवेदन किया कि इसको मेरी यादगार और परिवार का कुलदीपक जानकर अपने पास रखें तथा मुझे दिल्ली जाने की अनुमति दें।

मखदूम ने 690 हिजरी (1291) के अंत या 691 हिजरी (1292) के आरंभ में



दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। बड़े भाई शेख जलीलुद्दीन उनके साथ थे। दिल्ली पहुँचकर मखदूम ने उस समय के महान् सूफियों के यहाँ हाजिरी दी और उनको इस दृष्टि से देखा कि किसको अपना आध्यात्मिक गुरु बनाया जाए। लेकिन दिल्ली के सूफियों में से कोई उनकी नजर में नहीं समाया। मखदूम ने सब के यहाँ हाजिरी देने के बाद कहा कि 'यदि यही पीरी-मुरीदी है तो हम भी पीर हैं।'

केवल ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया की सेवा में उपस्थित होकर मखदूम प्रभावित हुए। दोनों के बीच वार्तालाप हुआ। निजामुद्दीन औलिया ने सम्मानित कर उन्हें पानों से भरा एक थाल प्रदान किया और कहा, 'यह शाहीन ऊँची उड़ानवाला है, लेकिन हमारे जाल के भाग्य में नहीं है।'

मखदूम दिल्ली से पानीपत आए और शेख बू अली कलंदर की सेवा में उपस्थित हुए। वहाँ भी उन्हें सफलता नहीं मिली। उन्होंने उनके बारे में कहा, 'पीर हैं, लेकिन मस्ती में रहते हैं। दूसरों की शिक्षा-दीक्षा नहीं कर सकते।'

दिल्ली और पानीपत से निराश होकर वापस आने पर बड़े भाई शेख जलीलुद्दीन ने ख्वाजा नजीबुद्दीन फिरदौसी का उल्लेख किया। मखदूम ने कहा, 'जो दिल्ली का महान् सूफी (ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया) था, उसने हमको पान देकर वापस कर दिया। अब दूसरे के पास जाकर क्या करेंगे?' भाई ने कहा कि भेंट करने में क्या हानि है। भाई ने जब बार-बार कहा तो उनसे भेंट करने के लिए दिल्ली रवाना हुए।

मखदूम दिल्ली इस शान से पहुँचे कि मुँह में पान दबा हुआ था और कुछ पान रूमाल में बँधे हुए थे। जब ख्वाजा नजीबुद्दीन फिरदौसी के आवास के समीप पहुँचे तो एक भय सा छा गया और बदन पसीना-पसीना हो गया। आश्चर्य हुआ और कहा कि मैं इससे पूर्व दूसरे सूफियों के यहाँ उपस्थित हुआ, लेकिन ऐसा दृश्य कहीं नहीं मिला। जब मखदूम ख्वाजा नजीबुद्दीन फिरदौसी के पास पहुँचे और ख्वाजा की दृष्टि उन पर पड़ी तो कहा, 'मुँह में पान, रूमाल में भी पान के पत्ते और दावा यह कि हम भी पीर हैं?' यह

सुनते ही मखदूम ने मुँह से पान को निकाल दिया और एक भय की अवस्था में शिष्टतापूर्वक बैठ गए। कुछ समय बीतने के बाद फिरदौसी-शृंखला में सम्मिलित करने का निवेदन किया। ख्वाजा ने स्वीकार किया और फिरदौसी-शृंखला में सम्मिलित कर लिया तथा स्वीकृति-पत्र देकर वापस कर दिया।

मखदूम ने ख्वाजा नजीबुद्दीन फिरदौसी से निवेदन किया कि मुझे तो अभी आपकी सेवा में कुछ दिन रहने का भी अवसर नहीं मिला। मैंने अध्यात्म की शिक्षा भी आप से प्राप्त नहीं की। मैं इस अहम जिम्मेवारी और कठिन काम को कैसे अंजाम दे सकता हूँ। ख्वाजा ने उनको विश्वास दिलाया कि तुम्हें इसमें अवश्य सफलता मिलेगी। और जाते-जाते कहा कि जब रास्ते में कोई खबर सुनने में आए तो वापस न होना।



मखदूम अभी रास्ते में ही थे कि ख्वाजा के निधन की सूचना मिली। मखदूम ने ख्वाजा के आदेशानुसार अपनी यात्रा जारी रखी और मनेर की ओर प्रस्थान किया। जिस समय ख्वाजा से विदा हुए, एक दर्द और शोक उनके दिल में बैठ गया, जो प्रतिदिन बढ़ता ही गया।



जब मखदूम बेहया, जो मनेर से तीस मील पश्चिम जिला भोजपुर में पहुँचे और मोर की पुकार सुनी तो दिल में एक हूक उठी, तब धैर्य एवं सहनशीलता का साथ न रहा। वस्त्र टुकड़े-टुकड़े कर जंगल का रास्ता लिया और अंतर्धान हो गए। भाइयों और यात्रा के साथियों ने बहुत तलाश किया, लेकिन कुछ पता न चला।

मखदूम बारह वर्ष तक बेहया के जंगल में रहे और किसी को सूचना न मिली। इसके बाद मखदूम को राजगीर के जंगल में देखा गया। लेकिन

किसी को मुलाकात करने का अवसर नहीं मिला। राजगीर का पहाड़ और जंगल हर धर्म और समुदाय के सूफी-संतों का एकांतवास रहा है। गौतम बुद्ध ने भी वर्षों यहाँ बैठकर ध्यान लगाया। जिस समय मखदूम यहाँ पराक्रम (मुजाहद) और तपस्या (रियाजत) में तल्लीन थे, उस समय यहाँ हिंदू जोगी भी जगह-जगह एकांतवासी थे। किताबों में इन हिंदू जोगियों के साथ मखदूम के अनेक संवाद उल्लेखित हैं। पर्वतीय मैदान में एक गरम झरने के समीप उनका कक्ष आज भी मौजूद है और 'मखदूम कुंड' के नाम से एक झरना भी मशहूर है।



बारह वर्ष की यह अवधि पराक्रम (मुजाहद) और तपस्या (रियाजत) में गुजरी। जंगल की पत्तियाँ भोजन का काम देती थीं। उस समय के पराक्रम (मुजाहद) और तपस्या (रियाजत) का उल्लेख करते हुए मखदूम ने एक बार अपने मुरीद काजी जाहिद से कहा, “मैंने जो पराक्रम (मुजाहद) और तपस्या (रियाजत) की है, यदि पहाड़ करता तो पानी हो जाता, लेकिन शरफुद्दीन कुछ नहीं हुआ।”





उसी समय ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया के एक खलीफा (प्रतिनिधि) मौलाना निजाम मौला बिहार शरीफ में रहते थे। उनको जब यह मालूम हुआ कि कुछ लोगों ने राजगीर के जंगल में मखदूम से मुलाकात की है तो उन्हें भी मखदूम से मिलने की इच्छा हुई। वह कभी-कभी अपने मुरीदों के साथ मखदूम से मिलने जंगल जाया करते थे। मखदूम ने कहा, “यह जंगल खतरनाक है। मुझे तुम्हारे आने से चिंता होती है। तुम लोग

शहर ही में रहो। मैं शुक्रवार को शहर आ जाया करूँगा और जामा मसजिद में मुलाकात हो जाया करेगी।” लोगों ने इस प्रस्ताव को मान लिया। मखदूम प्रत्येक शुक्रवार आते और मौलाना निजाम मौला तथा उनके मित्रों के साथ कुछ देर बैठकर जंगल में वापस चले जाते थे।

कुछ समय बाद मखदूम के चाहनेवालों ने आपस में विचार-विमर्श किया कि कोई ऐसी जगह बनाई जाए कि मखदूम जुमा की नमाज के बाद कुछ देर आराम कर लिया करें। अतः शहर से बाहर, जहाँ आज उनकी खानकाह स्थित है, उन्होंने दो छप्पर डाल दिए। जुम्मा की नमाज के बाद मखदूम कुछ देर इसमें बैठते और कभी-कभी एक-दो दिन ठहर भी जाते थे। उसके बाद मौलाना निजाम मौला ने बिहार के सूबेदार से अनुमति लेकर एक पक्का मकान बनवा दिया और एक सम्मेलन कर मखदूम से सज्जादा (गद्दी) पर बैठने का निवेदन किया। मखदूम ने सज्जादा को रौनक बख्शी। यह 721 हिजरी (1321) और 724 हिजरी (1324) की बात है। यह सुलतान गयासुद्दीन तुगलक का शासनकाल था। 724 हिजरी (1324) से लेकर 782 हिजरी (1380) तक आधी शताब्दी से अधिक मखदूम का समय लोगों को उपदेश एवं अनुदेश देने और मुरीदों की शिक्षा-दीक्षा में गुजरा। इस अवधि में एक लाख से अधिक व्यक्ति मखदूम के हाथों मुरीद (अनुयायी) हुए। इनमें से कम-से-कम तीन सौ बड़े सूफी हुए।

मखदूम के हालात और चरित्र से स्पष्ट होता है कि उन्होंने हजरत मोहम्मद साहब की कथनी और करनी का पूर्णतः अनुसरण करने की पूरी-पूरी कोशिश की। उनका कहना था कि शिष्टाचार (अखलाक) से बढ़कर अन्य कोई अच्छा तरीका तथा कोई और बनाव-सिंगार का साधन नहीं है। शिष्टाचार (अच्छे अखलाक) की हकीकत अल्लाह के आदेशों का पालन और उसके रसूल हजरत मोहम्मद साहब की शरीअत (धर्मशास्त्र) का अनुसरण करना है। इस संबंध में वे हजरत मोहम्मद साहब के एक सच्चे अनुयायी और उनके शिष्टाचार (अखलाक) का उदाहरण थे।

मखदूम बड़े कोमल हृदय, लोगों के लिए कृपालु एवं दयालु, मित्रप्रवर एवं शत्रुसेवी थे। अल्लाह वाले और सूफियों के स्थान तथा उनकी जीवन-शैली का उल्लेख करते हुए उन्होंने जो कुछ लिखा है, वह उनकी सच्ची तसवीर है। वे लिखते हैं—“उसकी दया और कृपा का सूर्य हर एक पर चमकता है, स्वयं नहीं खाता, लोगों को



खिलाता है, स्वयं नहीं पहनता, लोगों को पहनाता है। लोगों से उसे जो हानि पहुँचती है, उस पर ध्यान नहीं देता और उनके अत्याचार को नहीं देखता। जफा का बदला वफा से देता है। गाली का बदला दुआ एवं प्रशंसा से देता है। वह दया में सूर्य के समान होता है, जिस प्रकार मित्र पर चमकता है, उसी प्रकार शत्रु पर चमकता है। विनती में पृथ्वी की तरह होता है कि सारे प्राणी उसपर पाँव रखते हैं, वह किसी के साथ झगड़ा नहीं करता। दानशीलता (सखावत) में वह दरिया के समान होता है। शत्रु को उसी प्रकार देता है, जिस प्रकार मित्र को।”

इस दया एवं कृपा का फल था कि किसी प्राणी का दिल तोड़ना मखदूम के यहाँ पाप था। एक बार वे नफ़्त रोजा रखे हुए थे। एक व्यक्ति उनकी सेवा में उपहार-स्वरूप कुछ खाद्य लेकर आया और कहा कि मैं बड़े शौक से यह आपकी सेवा में लाया हूँ, आप इसे खा लें। मखदूम ने उसी समय उसे खा लिया और कहा कि ‘रोजा तोड़कर फिर रखा जा सकता है, लेकिन दिल तोड़कर जोड़ा नहीं जा सकता।’

मखदूम यथासंभव लोगों के दोष को प्रकट करने से बचते और यदि किसी व्यक्ति से संबंधित किसी पाप अथवा दोष की सूचना मिलती तो उसकी तावील (स्पष्टीकरण) करते। कहा जाता है कि एक दिन एक व्यक्ति ने आगे बढ़कर नमाज पढ़ी और उन्होंने उसके पीछे नमाज पढ़ी। किसी ने उनसे कहा कि यह व्यक्ति शराबी है, तो उन्होंने कहा, ‘हर समय नहीं पीता होगा।’ लोगों ने कहा, हर समय पीता है। उन्होंने कहा, ‘रमजान में नहीं पीता होगा।’

मखदूम प्रायः अपने मुरीदों को उच्चोत्साह एवं साहस की शिक्षा दिया करते थे। एक पत्र में उन्होंने उत्साहवर्धक शैली में उच्चोत्साह एवं साहस की शिक्षा देते हुए लिखा है—“तो कितना ही कमजोर सही, साहस एवं उत्साह को बुलंद रख भाई! मनुष्यों का साहस एवं उत्साह किसी भी वस्तु के साथ कमजोर नहीं होता, उनके साहस एवं उत्साह का बोझ आकाश व पृथ्वी और स्वर्ग व नरक नहीं उठा सकते।”

सैयद जमीरुद्दीन अहमद ने सही लिखा है कि उनकी दृष्टि प्रायः उन वस्तुओं पर लगी रहती, जो अभी प्राप्त न की गई हों। क्योंकि प्राप्त वस्तु उनको तुच्छ दिखाई देती थी और उच्चोत्साह एवं साहस के कारण हर समय, हर पल उनकी नजर सर्वश्रेष्ठ पर रहती थी। मखदूम आलस्य को एक रोग की संज्ञा देते थे और कहते थे—“यदि इसका उपचार न हुआ तो मनुष्य नष्ट होकर रह जाएगा। उसका उपचार हर प्रकार की इबादत (आराधना) का पालन करना है।” मखदूम कहते थे कि पाप से दिल काला हो जाता है। उसकी पहचान यही है कि पाप का भय दिल से जाता रहे। इबादत (आराधना) में आनंद न मिले। किसी की अच्छी बातें दिल को बुरी लगें। वे कहते थे—“जानते हो, पाप क्या है? तुम्हारे सुंदर मुखमंडल का तिल है, ताकि बुरी नजर उसी तिल पर पड़े और तुम्हारे सुंदर मुखमंडल को नजर न लगे।”

मखदूम ज्ञान एवं विद्या हर एक के लिए जरूरी समझते थे। वह कहा करते थे कि दिन-रात ज्ञान एवं विद्या प्राप्त करो। आराम व चैन, खाना-पीना और सोने का त्याग करो। जिस प्रकार नमाज के लिए पवित्र रहना जरूरी है, उसी प्रकार पराक्रम (मुजाहद) और तपस्या (रियाजत) के लिए ज्ञान एवं विद्या की आवश्यकता है। उनका मानना था कि जो ज्ञान एवं विद्या मनुष्य को लालसा की ओर ले जाए और जालिमों एवं गुमराहों के पास पहुँचाने का साधन हो, उसका नाम ज्ञान एवं विद्या नहीं है, बल्कि वह गुमराहों का जाल है। मखदूम बहुरचित लेखकों की श्रेणी में आते हैं, लेकिन उनकी अधिकांश रचनाएँ दीर्घकालीनता और लोगों की उपेक्षा के कारण नष्ट हो गईं। उनमें बहुत सी पुस्तकों के नाम भी इतिहास की पुस्तकों में मौजूद नहीं हैं, जो रचनाएँ मिलती हैं या जिनके नाम पुस्तकों में नजर आते हैं, उनकी संख्या 22 के लगभग है। ये सब पुस्तकें इसलाम धर्म और सूफी मत की शिक्षाओं व उपदेशों को दर्शाती हैं, लेकिन उनकी यादगार ‘मकतूबात’ (पत्रों का संग्रह) है, जो ‘मकतूबात-ए-सदी’ के नाम से जाना जाता है।

मखदूम की जीवित यादगार और उनकी विद्याओं व शिक्षाओं का वह अद्भुत

संग्रह है, जो न केवल उस समय की रचनाओं में, बल्कि सूफी मत की तमाम रचनाओं में विशेष स्थान रखता है।

बिहार और उसके आस-पास के क्षेत्रों में मखदूम के बहुत से दोहे और सूक्त-वाक्य बहुत प्रचलित हैं, जैसे—

शरफा भटका फिरे और चित्त मित्त करे उदास।
साईं बसे शरीर में के ज्यु भोलन में बास॥
शरफा गोर डरावनी और विश अंधयारी रात।
वां न कोइ पूछे के कौन तुहारी जात॥
ज्ह कुत्ता दर-दर फिरे, दर-दर दुर-दुर होइ।
एक दर को थाम ले, कहे न दुर-दुर कोइ॥
लुद्ध फिटकीरी मुरदा संग, हल्दी जीरा एक-एक टंग।
अफिम चना भर, मिर्ची चार, उड़द भर थुथा उसमें डार।
पोस्त के पानी पोटली करे, नयना पीड़ा पल में हरे।
तिल, तीसी, दाना तेखुर, ताल मखाना।
घी शक्कर में साना, खाए जनाना हो मरदाना॥
जी मगन में है के आई हैं सुहानी रतियाँ।
जिनके कारण थे बहुत दिन से बनाई गतियाँ॥

782 हिजरी (1380) में मखदूम की मृत्यु हो गई। जनाजा की नमाज शेख अशरफ जहाँगीर समनानी ने पढ़वाई, जो निधन के बाद वहाँ पहुँचे थे। इस प्रकार पूरी एक शताब्दी तक अपने उपदेशों से लोगों को अच्छाई एवं नेकी का रास्ता दिखाकर वे इस दुनिया से चले गए और बिहार की गौरवशाली धरती को सदा के लिए जुदाई का गम दे गए।

□□□

